IMPACT FACTOR 5.397 (SJIF USA)
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 4, Issue 1, January-March, 2026
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

महात्मा गांधी का शिक्षा-दर्शन और भारतीय ज्ञान-परंपरा

1. राजेन्द्र कुमार
शोधार्थी
शिक्षाशास्त्र संकाय
(बी आर ए बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर)
2. डॉ0 शोभा रानी
सहायक प्राध्यापक (दर्शनशास्त्र विभाग)
देवचंद महाविद्यालय, हाजीपुर(वैशाली)

सार

महात्मा गांधी का शिक्षा–दर्शन आधुनिक भारतीय बौद्धिक इतिहास की सबसे मौलिक अवधारणाओं में से एक है। यह दर्शन औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली की बुनियादी आलोचना करते हुए भारतीय ज्ञान–परंपरा की नैतिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक चेतना को पुनर्स्थापित करता है। ब्रिटिश शासन द्वारा लागू की गई शिक्षा व्यवस्था भारतीय समाज को अपनी जड़ों से काटकर केवल प्रशासनिक और उपनिवेशी आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बना चुकी थी। महात्मा गांधी ने इसे मानसिक दासता का उपकरण कहा और इसके विकल्प के रूप में 'नई तालीम' की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसमें शिक्षा को श्रम, नैतिकता, आत्मनिर्भरता और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा गया।

भारतीय ज्ञान–परंपरा में शिक्षा का लक्ष्य केवल रोजगार नहीं, बल्कि आत्म–बोध, चरित्र निर्माण और लोकमंगल रहा है। उपनिषदों में आत्मज्ञान को सर्वोच्च विद्या माना गया, भगवद्गीता में कर्मयोग और निष्काम सेवा को जीवन का आदर्श बताया गया तथा बौद्ध–जैन परंपराओं में नैतिक अनुशासन और करुणा को शिक्षा का मूल माना गया।वस्तुतः गांधी का शिक्षा–दर्शन इसी परंपरा का आधुनिक पुनर्पाठ है, जिसमें विद्यार्थी को समाज, प्रकृति और श्रम से जोड़कर एक संपूर्ण मनुष्य के रूप में विकसित करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत शोध–आलेख गांधी की शिक्षा–दृष्टि को भारतीय ज्ञान–परंपरा के संदर्भ में विश्लेषित करता है और यह स्थापित करता है कि गांधी का 'नई तालीम' मॉडल केवल एक शैक्षिक पद्धति नहीं बल्कि एक सभ्यतागत विकल्प है।

आज के वैश्वीकृत, उपभोक्तावादी और प्रतिस्पर्धात्मक युग में जब शिक्षा मानवीय मूल्यों से विमुख होती जा रही है, तब गांधी की दृष्टि एक नैतिक, समावेशी और सतत विकासोन्मुख शिक्षा मॉडल प्रस्तुत करती है। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारतीय शिक्षा के पुनर्निर्माण के लिए गांधी का दर्शन आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

शब्द कुंजी– नई तालीम, भारतीय ज्ञान परम्परा, कर्म योग, नैतिक शिक्षा, शिक्षा में स्वराज, अनुभव–आधारित शिक्षण

परिचर्चा

अंग्रेजों द्वारा स्थापित आधुनिक शिक्षा प्रणाली का मूल उद्देश्य भारतीय समाज का सर्वांगीण बौद्धिक, नैतिक और सांस्कृतिक उत्थान नहीं था, बल्कि उपनिवेशी शासन की आवश्यकताओं के अनुरूप एक ऐसा मध्यवर्ती वर्ग तैयार करना था जो प्रशासनिक रूप से दक्ष, मानसिक रूप से आज्ञाकारी और सांस्कृतिक रूप से अंग्रेजी प्रभुत्व का वाहक हो। 1835 ई0 में प्रस्तुत मैकाले के 'मिनट ऑन इंडियन एजुकेशन' ने इस उद्देश्य को वैचारिक स्पष्टता प्रदान की। इसमें 'भारतीय भाषाओं, साहित्य और ज्ञान–परंपराओं को हीन और अप्रासंगिक घोषित करते हुए पश्चिमी ज्ञान, विशेषतः अंग्रेजी भाषा और यूरोपीय विज्ञान को श्रेष्ठ बताया गया'[1]। इस नीति के माध्यम से शिक्षा को औपनिवेशिक सत्ता के वैचारिक औजार के रूप में रूपांतरित कर दिया गया।

औपनिवेशिक शासन से पूर्व भारत में गुरुकुल, मदरसा, पाठशाला, टोल और विहार जैसी विविध शैक्षणिक संस्थाएँ विद्यमान थीं, जिनका उद्देश्य केवल आजीविका अर्जन हेतु कौशल प्रदान करना नहीं था, बल्कि शिक्षार्थियों का व्यक्तित्व निर्माण, नैतिक अनुशासन, सामाजिक उत्तरदायित्व और आत्मिक विकास भी था[2]। शिक्षा समाज और लोकजीवन से गहराई से जुड़ी हुई थी तथा स्थानीय भाषाओं और सांस्कृतिक संदर्भों में निहित थी। ब्रिटिश शिक्षा व्यवस्था ने इस जीवंत परंपरा को न केवल उपेक्षित किया, बल्कि विभिन्न विरुद्ध एवं सोद्देश्य प्रकल्पों द्वारा इसे क्रमशः नष्ट भी किया।

इस दीर्घ लेकिन लक्षित प्रक्रिया का सबसे गहरा प्रभाव भारतीय मानस पर पड़ा। कालांतर में अंग्रेजी शिक्षा ने भारत में एक ऐसी मानसिकता को जन्म दिया जिसमें देशज भाषा, इतिहास और संस्कृति के प्रति हीनभावना उत्पन्न हुई और पश्चिमी मानकों को प्रगति का एकमात्र मापदंड मान लिया गया।

महात्मा गांधी ने अंग्रेजो द्वारा प्रतिस्थापित इस लक्षित शिक्षा प्रणाली की तीखी आलोचना करते हुए इसे "मानसिक दासता"

की संज्ञा दी। उनके अनुसार यह शिक्षा भारत को "अपने ही घर में पराया" बना रही थी[3]। वस्तुतः ब्रिटिश शिक्षा व्यवस्था ज्ञान का माध्यम कम और औपनिवेशिक प्रभुत्व को स्थायी बनाने का साधन अधिक सिद्ध हुई।

भारतीय परंपरा में शिक्षा को केवल सूचना–संग्रह या व्यावसायिक दक्षता का साधन नहीं माना गया, बल्कि उसे 'विद्या' कहा गया जिसका निहितार्थ एक ऐसी प्रक्रिया से है, जो मनुष्य को आत्मबोध की ओर ले जाए और अंततः मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करे। मुण्डक उपनिषद में स्पष्ट कहा गया है–"सा विद्या या विमुक्तये", अर्थात वही विद्या सार्थक है जो बंधनों से मुक्ति दिलाए[4]। यहाँ शिक्षा का लक्ष्य केवल बाह्य उपलब्धियाँ नहीं, बल्कि आंतरिक चेतना का विकास भी है। इस दृष्टि से विद्या मनुष्य के अस्तित्वगत प्रश्नों से जुड़ी हुई है।

भगवद्गीता में शिक्षा का दार्शनिक आधार कर्मयोग में निहित है। गीता मनुष्य को निष्काम कर्म का उपदेश देती है, जहाँ ज्ञान का वास्तविक रूप कर्तव्य–पालन में प्रकट होता है[5]।

यहाँ शिक्षा का उद्देश्य अहंकार का क्षय, विवेक का विकास और समाज के प्रति उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करना है। इस प्रकार गीता की शिक्षण–दृष्टि व्यक्ति और समाज के बीच संतुलन स्थापित करती है।

भारतीय परंपरा में ही दूसरी ओर बौद्ध दर्शन में शिक्षा को प्रज्ञा अर्थात–सम्यक ज्ञान, शील अर्थात–नैतिक आचरण और करुणा अर्थात–संवेदना के त्रिसूत्र में बांधा गया है[6]। बौद्ध शिक्षा पद्धति मनुष्य को दुःख के कारणों की पहचान कर उनसे मुक्ति की राह दिखाती है। यहाँ ज्ञान तब तक अधूरा है, जब तक वह नैतिकता और करुणा से संयुक्त न हो। इसी प्रकार जैन परंपरा में शिक्षा का केंद्र आत्मसंयम, तप और अहिंसा है[7]। जैन दर्शन में विद्या आत्मशुद्धि का साधन है, जो व्यक्ति को हिंसा, लोभ और मोह से दूर ले जाती है।

इस प्रकार भारतीय ज्ञान–परंपरा में शिक्षा जीवन से गहराई से जुड़ी हुई थी। यह केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं, बल्कि ज्ञान, आचरण और सेवा का समन्वय थी, जिसमें व्यक्ति का आत्मिक विकास और सामाजिक कल्याण एक–दूसरे से अविच्छिन्न रूप में जुड़े थे।

महात्मा गांधी की 'नई तालीम' अथवा 'बुनियादी शिक्षा' की अवधारणा भारतीय ज्ञान–परंपरा का आधुनिक और व्यवहारिक रूप प्रस्तुत करती है। वस्तुतः गाँधी जी द्वारा प्रस्तावित यह शिक्षा–पद्धति औपनिवेशिक शिक्षा के वैचारिक प्रतिरोध के रूप में विकसित हुई, जिसमें शिक्षा को जीवन, श्रम, चरित्र निर्माण और नैतिकता से पुनः जोड़ा गया। 1937 में प्रस्तुत वर्धा शिक्षा योजना के अंतर्गत गांधी जी ने स्पष्ट किया कि शिक्षा का उद्देश्य केवल साक्षरता या रोजगारपरक कौशल प्रदान करना नहीं, बल्कि शिक्षार्थियों को "शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक रूप से पूर्ण मानव बनाना" है[8]। इस दृष्टि से नई तालीम व्यक्ति के समग्र विकास की परिकल्पना प्रस्तुत करती है।

गांधी जी ने शिक्षा को उत्पादक श्रम से अनिवार्य रूप से जोड़ा। उनके अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बच्चों को समाजोपयोगी बनाए और आत्मनिर्भरता का बोध कराए। हस्तकला, कृषि, कताई–बुनाई जैसे कार्यों को शिक्षा का केंद्र बनाकर उन्होंने श्रम की गरिमा को पुनर्स्थापित किया। यह विचार सीधे–सीधे भगवद्गीता के कर्मयोग से प्रेरित था, जहाँ कर्म को साधना का रूप माना गया है। गांधी जी का मानना था कि श्रम और ज्ञान का समन्वय ही सच्ची शिक्षा है।

ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली की तीखी आलोचना करते हुए गांधी ने कहा कि हाथ और दिमाग का अलगाव आधुनिक सभ्यता की सबसे बड़ी भूल है[9]। इस विभाजन ने बौद्धिक श्रम को श्रेष्ठ और शारीरिक श्रम को हेय बना दिया, जिससे सामाजिक असमानता और मानसिक दासता को बढ़ावा मिला। नई तालीम इस द्वैत को समाप्त करने का प्रयास थी, जिसमें 'सीखना' और 'करना' एक–दूसरे से अविभाज्य थे।

इस प्रकार, गांधी जी की नई तालीम केवल एक शैक्षिक योजना नहीं, बल्कि एक वैकल्पिक सभ्यतागत दृष्टि थी। यह शिक्षा को नैतिकता, आत्मनिर्भरता और सामाजिक न्याय से जोड़ती है तथा भारतीय परंपरा की मूल भावना–ज्ञान, कर्म और सेवा के समन्वय–को आधुनिक संदर्भ में पुनर्स्थापित करती है।

महात्मा गांधी के अनुसार शिक्षा का केंद्रीय लक्ष्य आत्मनिर्भरता है, क्योंकि आत्मनिर्भर व्यक्ति ही वास्तविक अर्थों में स्वतंत्र और स्वाभिमानी नागरिक बन सकता है। गांधी जी का मानना था कि जब तक शिक्षा को उत्पादन और श्रम से नहीं जोड़ा जाएगा, तब तक वह जीवन से कटी हुई और समाज के लिए अप्रासंगिक बनी रहेगी। इसी कारण उन्होंने शिक्षार्थी को किसी न किसी उत्पादक कार्य से जोड़ने पर विशेष बल दिया। उनके अनुसार शिक्षा के माध्यम से अर्जित ज्ञान तभी सार्थक है, जब वह व्यक्ति को अपने श्रम के बल पर जीविका अर्जन और समाज–सेवा में सक्षम बनाए[10]। गांधी जी के लिए आत्मनिर्भरता केवल आर्थिक स्वावलंबन तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह नैतिक और मानसिक स्वतंत्रता का भी आधार थी। उत्पादन से जुड़ा शिक्षार्थी श्रम की गरिमा को समझता है और समाज के प्रति उत्तरदायित्व विकसित करता है। इस प्रक्रिया में शिक्षार्थी को श्रम से सम्मान मिलता है, जिससे स्वराज का वास्तविक भाव उत्पन्न होता है। वस्तुतः गांधी जी का स्वराज केवल राजनीतिक सत्ता हस्तांतरण नहीं, बल्कि आत्म–अनुशासित, कर्तव्यनिष्ठ और स्वाभिमानी नागरिकों का निर्माण था। यह दृष्टि प्राचीन भारत की उस शैक्षिक परंपरा से गहराई से मेल खाती है, जिसमें शिक्षा और आजीविका को अलग नहीं माना गया था। गुरुकुलों, आश्रमों और संघों/मठों में शिक्षा

जीवनोपयोगी कौशल, नैतिक अनुशासन और सामाजिक दायित्व के साथ दी जाती थी। इस प्रकार, गांधी जी की शिक्षा–दृष्टि भारतीय परंपरा का पुनराविष्कार थी, जिसमें शिक्षा जीवन, श्रम और स्वराज के अविभाज्य संबंध को पुनः स्थापित किया गया।

महात्मा गांधी का दृढ़ विश्वास था कि शिक्षार्थी के व्यक्तित्व पर शिक्षा का वास्तविक प्रभाव तभी पड़ता है, जब वह शिक्षार्थी की मातृभाषा में दी जाए। उनके अनुसार मातृभाषा में शिक्षा से बालक का आत्मसम्मान विकसित होता है और उसकी सृजनात्मक क्षमता सहज रूप से उभरती है[11]। विदेशी भाषा के माध्यम से दी गई शिक्षा बालक के मन और अभिव्यक्ति के बीच दूरी पैदा करती है, जिससे उसका आत्मविश्वास क्षीण होता है और सोच उधार की बन जाती है। गांधी जी इसे मानसिक पराधीनता का सूक्ष्म रूप मानते थे। गांधी जी का यह विचार भारतीय भाषाई परंपरा से गहराई से जुड़ा हुआ है। प्राचीन भारत में ज्ञान का प्रसार केवल संस्कृ त तक सीमित नहीं था, बल्कि प्राकृत, पाली, अपभ्रंश और विविध लोकभाषाओं के माध्यम से भी इसका प्रसार हुआ। बौद्ध और जैन परंपराओं ने पाली और प्राकृत को ज्ञान की भाषा बनाकर सामान्य जन को दर्शन और नैतिकता से जोड़ा। मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के दौरान भक्त कवियों एवं संतों ने अवधी, ब्रज, मैथिली और अन्य लोकभाषाओं में रचना कर ज्ञान और भक्ति को जनसुलभ बनाया। इस परंपरा में भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक पहचान का आधार भी थी। गांधी जी इसी परंपरा को आधुनिक शिक्षा में पुनर्स्थापित करना चाहते थे। उनके लिए मातृभाषा में शिक्षा राष्ट्रीय स्वाभिमान, सांस्कृतिक निरंतरता और रचनात्मक स्वतंत्रता की शर्त थी। इस प्रकार गांधी जी की भाषाई दृष्टि शिक्षा को आत्मबोध और सांस्कृतिक मुक्ति से जोड़ती है।

महात्मा गांधी के अनुसार शिक्षा का वास्तविक अर्थ केवल अक्षर–ज्ञान या औपचारिक साक्षरता तक सीमित नहीं है, बल्कि उसका मूल उद्देश्य चरित्र निर्माण है। उनका प्रसिद्ध कथनकृ"शिक्षा का अर्थ केवल साक्षरता नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण है"[12]–इस बात को स्पष्ट करता है कि शिक्षा का मूल्यांकन उसके नैतिक और मानवीय प्रभावों के आधार पर होना चाहिए। यदि शिक्षा व्यक्ति को ईमानदार, करुणाशील और उत्तरदायित्वपूर्ण नहीं बनाती, तो वह अधूरी और दिशाहीन है।

गांधी जी की यह शिक्षा–दृष्टि भारतीय दार्शनिक परंपरा से गहराई से जुड़ी हुई है। उपनिषदों में शिक्षा को आत्मज्ञान और संयम से जोड़ा गया है, जहाँ विद्या का लक्ष्य अहंकार का क्षय और सत्य की अनुभूति है। बुद्ध की शिक्षाओं में भी शील, प्रज्ञा और करुणा को केंद्रीय स्थान दिया गया है। बौद्ध परंपरा में ज्ञान तभी सार्थक माना गया, जब वह नैतिक आचरण और करुणामय व्यवहार में रूपांतरित हो। इसी प्रकार स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा को "मनुष्य में निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति" कहा, जिसमें चरित्र, साहस और सेवा–भाव प्रमुख तत्व हैं। इस प्रकार, गांधी जी के लिए शिक्षा समाज–परिवर्तन का साधन थी। चरित्रवान व्यक्ति ही न्यायपूर्ण, समतामूलक और नैतिक समाज का निर्माण कर सकता है। इसलिए गांधी की शिक्षा–दृष्टि भारतीय ज्ञान–परंपरा की उस मूल भावना को पुनर्स्थापित करती है, जिसमें विद्या और सदाचार को अविभाज्य माना गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 भारतीय शिक्षा–दृष्टि में एक महत्वपूर्ण वैचारिक परिवर्तन का संकेत देती है। यह नीति भारतीय ज्ञान–परंपरा, मातृभाषा तथा कौशल–आधारित शिक्षा पर विशेष बल देती है[13]–जो औपनिवेशिक काल से चली आ रही शिक्षा–पद्धति से भिन्न दिशा को रेखांकित करता है। इस शिक्षा नीति में प्राचीन भारतीय दर्शन, योग, आयुर्वेद, गणित, खगोलशास्त्र और लोकज्ञान को पाठ्यक्रम से जोड़ने की बात कही गई है, जिससे शिक्षा सांस्कृतिक जड़ों से पुनः जुड़ सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा या स्थानीय भाषा में देने की अनुशंसा गांधी जी की उस मान्यता की पुष्टि करती है कि –'भाषा केवल माध्यम नहीं, बल्कि चेतना और सृजनात्मकता का आधार है'। इसी प्रकार, इस नीति में कौशल विकास, व्यावसायिक शिक्षा और 'हैंड्स–ऑन लर्निंग' पर दिया गया जोर गांधी जी की नई तालीम की अवधारणा से सीधा संवाद स्थापित करता है, जहाँ शिक्षा को श्रम और जीवन से जोड़ा गया था। इसके अलावे, इस शिक्षा नीति का बहु–विषयक दृष्टिकोण, नैतिक मूल्यों, संवैधानिक आदर्शों और समग्र विकास पर बल, गांधी जी की शिक्षा–दृष्टि के मूल तत्वोंकृचरित्र निर्माण, आत्मनिर्भरता और सामाजिक उत्तरदायित्व–को आधुनिक संदर्भ में पुनर्स्थापित करता है। इस प्रकार ,राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 को गांधी के शैक्षिक विचारों का समकालीन और संस्थागत रूप कहा जा सकता है, जो भारतीय परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करती है।

निष्कर्ष

महात्मा गांधी का शिक्षा–दर्शन भारतीय ज्ञान–परंपरा का केवल अनुसरण नहीं, बल्कि उसका आधुनिक पुनर्जागरण है। उन्होंने शिक्षा को औपनिवेशिक ढांचे से मुक्त कर उसे जीवन, समाज और नैतिकता से पुनः जोड़ा। गांधी जी के लिए शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्री प्राप्त करना या रोजगार हासिल करना नहीं था, बल्कि आत्म–निर्माण, चरित्र–गठन और सामाजिक उत्तरदायित्व की चेतना विकसित करना था। उनकी नई तालीम भारतीय दार्शनिक परंपरा–कर्मयोग, सत्य, अहिंसा, सेवा और आत्मबोध–को आधुनिक सामाजिक यथार्थ के साथ सृजनात्मक रूप में जोड़ती है। औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था ने भारतीय समाज को उसकी सांस्कृ तिक और बौद्धिक जड़ों से काट दिया था तथा शिक्षा को अभिजन, उपभोक्तावादी और प्रतियोगी बना दिया था। गांधी जी ने इस प्रवृत्ति का प्रतिरोध करते हुए शिक्षा को भारतीय संस्कृति, श्रम की गरिमा और सामूहिक कल्याण से जोड़ा। उनके अनुसार शिक्षा तब तक अधूरी है, जब तक वह समाज के अंतिम व्यक्ति के जीवन में सम्मान, आत्मनिर्भरता और नैतिक बल नहीं भरती। वर्तमान समय में, जब शिक्षा बाजार–केन्द्रित, अंक–प्रधान और अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक होती जा रही है, गांधी जी की शिक्षा–दृष्टि एक मानवीय,

समावेशी और नैतिक विकल्प प्रस्तुत करती है। यह दृष्टि व्यक्ति को केवल सफल पेशेवर नहीं, बल्कि संवेदनशील और जिम्मेदार नागरिक बनाती है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि गांधी का शिक्षा–दर्शन अतीत की स्मृति मात्र नहीं, बल्कि भविष्य की अनिवार्य आवश्यकता है। भारतीय ज्ञान–परंपरा और गांधी–दृष्टि का समन्वय एक ऐसे शिक्षा–मॉडल की नींव रखता है जो आत्मनिर्भर, नैतिक और समाजोपयोगी नागरिकों का निर्माण कर सके।

संदर्भ सूची–

1. मैकॉले, थॉमस बैबिंगटन, मिनट ऑन इंडियन एजुकेशन, 1835, पुनर्मुद्रित : शार्प, एच0, सेलेक्शन्स फ्रॉम एजुकेशनल रिकॉर्ड्स, पार्ट–5, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, कलकत्ता, (1920), पृ0 107–117।
2. शर्मा, आर0 एन0, भारतीय शिक्षा का इतिहास, : रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, (2010), पृ. 45–60।
3. महात्मा गांधी, हिन्द स्वराज, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, (1938/2009), पृ0 84–86।
4. मुण्डक उपनिषद, 1–2–12, राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, द प्रिंसिपल उपनिषद्स, हार्पर कॉलिन्स, (1994), पृ0 682।
5. भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 47 : गीता प्रेस, गोरखपुर, (विभिन्न संस्करण)।
6. हिरियन्ना, एम., आउटलाइन्स ऑफ इंडियन फिलॉसफी : मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, (2005), पृ. 150–155।
7. जैन, जगदीशचंद्र, जैन दर्शन और संस्कृति : भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, (2001), पृ0 98–105।
8. महात्मा गांधी, बेसिक एजुकेशन (वर्धा स्कीम), 1937, कुमारी, कृष्णा, एजुकेशन इन इंडिया : कॉलोनियल एंड पोस्ट–कॉलोनियल पीरियड्स : सेज पब्लिकेशन्स, (2005), पृ0 67–70।
9. महात्मा गांधी, हरिजन, 1937, विभिन्न लेख : नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद।
10. महात्मा गांधी, टुवर्ड्स न्यू एजुकेशन : नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, (1953), पृ0 23–30।
11. महात्मा गांधी, यंग इंडिया, 1921–22 के लेख, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद।
12. महात्मा गांधी, ट्रू एजुकेशन, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, (1962), पृ0 12–15।
13. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, (2020), पृ0 5–20।